पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'

(सन् 1900–1967)

पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' का जन्म उत्तर प्रदेश के मिर्ज़ापुर ज़िले के चुनार नामक ग्राम में हुआ था। परिवार में अभावों के कारण उन्हें व्यवस्थित शिक्षा पाने का सुयोग नहीं मिला। मगर अपनी नैसर्गिक प्रतिभा और साधना से उन्होंने अपने समय के अग्रणी गद्य शिल्पी के रूप में अपनी पहचान बनाई। अपने तेवर और शैली के कारण उग्र जी अपने समय के चर्चित लेखक रहे। अपने कवि मित्र निराला की तरह उन्हें भी पुरातनपंथियों के कठोर विरोध का सामना करना पड़ा।

पत्रकारिता से उग्र जी का सक्रिय संबंध था। वे ***आज*, *विश्वमित्र*, *स्वदेश*, *वीणा*, *स्वराज्य*** *और* ***विक्रम*** *के संपादक रहे, लेकिन* **मतवाला-मंडल** *के प्रमुख सदस्य के रूप में उनकी विशेष पहचान है।*

उग्र जी ने शताधिक कहानियाँ लिखी हैं जो ***पंजाब की महारानी*, *रेशमी*, *पोली इमारत*, *चित्र-विचित्र*, *कंचन-सी काया*, *काल कोठरी*, *ऐसी होली खेलो लाल*, *कला का पुरस्कार*** *आदि में संकलित हैं।* ***चंद हसीनों के खतूत*, *बुधुआ की बेटी*, *दिल्ली का दलाल*, *मनुष्यानंद*** *आदि अनेक यथार्थवादी उपन्यासों की रचना भी उन्होंने की। कहानी और उपन्यास के अतिरिक्त आत्मकथा, संस्मरण, रेखाचित्र आदि के क्षेत्रों में भी उनकी लेखनी गतिशील रही। उनकी आत्मकथा* ***अपनी खबर*** *साहित्य जगत में बहुचर्चित है। उन्होंने* **महात्मा ईसा** *(नाटक) और* ***ध्रुवधारण*** *(खंडकाव्य) की भी रचना की है।*

उग्र जी की कहानियों की भाषा सरल, अलंकृत और व्यावहारिक है, जिसमें उर्दू के व्यावहारिक शब्द भी अनायास ही आ जाते हैं। भावों को मूर्तिमंत करने में इनकी भाषा अत्यधिक सजीव और सशक्त कही जा सकती है, जो पाठक

© NCERT not to be republished

के मर्मस्थल पर सीधा प्रहार करती है। भावों के अनुरूप इनकी शैली भी व्यंग्यपरक है। इनकी कहानियों में **उसकी माँ**, **शाप**, **कला का पुरस्कार**, **जल्लाद** और **देशभक्त** आदि विशेष प्रसिद्ध हैं।

उग्र जी प्रेमचंदयुगीन कहानीकार हैं इसलिए उस समय की मुख्य प्रवृत्ति – समाज सुधार इनकी कहानियों में भी मौजूद है। **उसकी माँ** कहानी देश की दुरवस्था से चिंतित युवा पीढ़ी के विद्रोह को नए रूप में प्रस्तुत करती है। यह युवा पीढ़ी देश की दुरवस्था का ज़िम्मेदार शासन-तंत्र को मानती है तथा इस शासन-तंत्र को उखाड़ फेंकना चाहती है। दुष्ट, व्यक्ति-नाशक राष्ट्र के सर्वनाश में अपना योगदान ही इस पीढ़ी का सपना है। यथार्थ के तूफ़ानों से बेपरवाह यह पीढ़ी जानती है कि नष्ट हो जाना तो यहाँ का नियम है। जो सँवारा गया है, वह बिगड़ेगा ही। हमें दुर्बलता के डर से अपना काम नहीं रोकना चाहिए। कर्म के समय हमारी भुजाएँ दुर्बल नहीं, भगवान की सहस्त्र भुजाओं की सखियाँ हैं।

नयी पीढ़ी का यह विद्रोही स्वर जहाँ राजसत्ता से विद्रोह की मशाल लिए खड़ा है, वहीं पूर्ववर्ती पीढ़ी का बुद्धिजीवी समाज अपनी सुविधा के लिए राजसत्ता के तलवे चाटने को तैयार है। इन दोनों के बीच खड़ी है एक माँ, जो अपना बेटा चाहती है, अपना लाल और उसकी खुशहाली। समाज के दो सिरों के बीच खड़ी ममतामयी माँ लाख कोशिशों के बावजूद व्यवस्था की चक्की से अपने बेटे को बचा नहीं पाती। पूरी कथा में व्याप्त तत्कालीन जनमानस, स्वाधीनता आंदोलन तथा माँ की ममता का सजीव चित्रण पाठक को उद्वेलित करता है।

© NCERT not to be republished

11069CH08

उसकी माँ

दोपहर को ज़रा आराम करके उठा था। अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में खड़ा-खड़ा बड़ी-बड़ी अलमारियों में सजे पुस्तकालय की ओर निहार रहा था। किसी महान लेखक की कोई कृति उनमें से निकालकर देखने की बात सोच रहा था। मगर, पुस्तकालय के एक सिरे से लेकर दूसरे तक मुझे महान ही महान नज़र आए। कहीं गेटे, कहीं रूसो, कहीं मेज़िनी, कहीं नीत्शे, कहीं शेक्सपीयर, कहीं टॉलस्टाय, कहीं ह्यूगो, कहीं मोपासाँ, कहीं डिकेंस, स्पेंसर, मैकाले, मिल्टन, मोलियर...उफ़! इधर से उधर तक एक-से-एक महान ही तो थे! आखिर मैं किसके साथ चंद मिनट मनबहलाव करूँ, यह निश्चय ही न हो सका, महानों के नाम ही पढ़ते-पढ़ते परेशान सा हो गया।

इतने में मोटर की पों-पों सुनाई पड़ी। खिड़की से झाँका तो सुरमई रंग की कोई 'फिएट' गाड़ी दिखाई पड़ी। मैं सोचने लगा – शायद कोई मित्र पधारे हैं, अच्छा ही है। महानों से जान बची!

जब नौकर ने सलाम कर आनेवाले का कार्ड दिया, तब मैं कुछ घबराया। उसपर शहर के पुलिस सुपरिंटेंडेंट का नाम छपा था। ऐसे बेवक्त ये कैसे आए?

पुलिस-पति भीतर आए। मैंने हाथ मिलाकर, चक्कर खानेवाली एक गद्दीदार कुरसी पर उन्हें आसन दिया। वे व्यापारिक मुसकराहट से लैस होकर बोले, "इस अचानक आगमन के लिए आप मुझे क्षमा करें।"

© NCERT not to be republished

"आज्ञा हो!" मैंने भी नम्रता से कहा।

उन्होंने पॉकेट से डायरी निकाली, डायरी से एक तसवीर। बोले, "देखिए इसे, ज़रा बताइए तो, आप पहचानते हैं इसको?"

"हाँ, पहचानता तो हूँ," ज़रा सहमते हुए मैंने बताया।

"इसके बारे में मुझे आपसे कुछ पूछना है।"

"पूछिए।"

"इसका नाम क्या है?"

"लाल! मैं इसी नाम से बचपन ही से इसे पुकारता आ रहा हूँ। मगर, यह पुकारने का नाम है। एक नाम कोई और है, सो मुझे स्मरण नहीं।"

"कहाँ रहता है यह?" सुपरिंटेंडेंट ने मेरी ओर देखकर पूछा।

"मेरे बँगले के ठीक सामने एक दोमंज़िला, कच्चा-पक्का घर है, उसी में वह रहता है। वह है और उसकी बूढ़ी माँ।"

"बूढ़ी का नाम क्या है?"

"जानकी।"

"और कोई नहीं है क्या इसके परिवार में? दोनों का पालन-पोषण कौन करता है?"

"सात-आठ वर्ष हुए, लाल के पिता का देहांत हो गया। अब उस परिवार में वह और उसकी माता ही बचे हैं। उसका पिता जब तक जीवित रहा, बराबर मेरी ज़मींदारी का मुख्य मैनेजर रहा। उसका नाम रामनाथ था। वही मेरे पास कुछ हज़ार रुपए जमा कर गया था, जिससे अब तक उनका खर्चा चल रहा है। लड़का कॉलेज में पढ़ रहा है। जानकी को आशा है, वह साल-दो साल बाद कमाने और परिवार को सँभालने लगेगा। मगर क्षमा कीजिए, क्या मैं यह पूछ सकता हूँ कि आप उसके बारे में क्यों इतनी पूछताछ कर रहे हैं?"

"यह तो मैं आपको नहीं बता सकता, मगर इतना आप समझ लें, यह सरकारी काम है। इसलिए आज मैंने आपको इतनी तकलीफ़ दी है।"

"अजी, इसमें तकलीफ़ की क्या बात है! हम तो सात पुश्त से सरकार के फ़रमाबरदार हैं। और कुछ आज्ञा..."

© NCERT not to be republished

"एक बात और...", पुलिस-पति ने गंभीरतापूर्वक धीरे से कहा, "मैं मित्रता से आपसे निवेदन करता हूँ, आप इस परिवार से ज़रा सावधान और दूर रहें। फिलहाल इससे अधिक मुझे कुछ कहना नहीं।"

"लाल की माँ!" एक दिन जानकी को बुलाकर मैंने समझाया, "तुम्हारा लाल आजकल क्या पाजीपन करता है? तुम उसे केवल प्यार ही करती हो न! हूँ! भोगोगी!"

"क्या है, बाबू?" उसने कहा।

"लाल क्या करता है?"

"मैं तो उसे कोई भी बुरा काम करते नहीं देखती।"

"बिना किए ही तो सरकार किसी के पीछे पड़ती नहीं। हाँ, लाल की माँ! बड़ी धर्मात्मा, विवेकी और न्यायी सरकार है यह। ज़रूर तुम्हारा लाल कुछ करता होगा।"

"माँ! माँ!" पुकारता हुआ उसी समय लाल भी आया – लंबा, सुडौल, सुंदर, तेजस्वी।

"माँ!!" उसने मुझे नमस्कार कर जानकी से कहा, "तू यहाँ भाग आई है। चल तो! मेरे कई सहपाठी वहाँ खड़े हैं, उन्हें चटपट कुछ जलपान करा दे, फिर हम घूमने जाएँगे!"

"अरे!" जानकी के चेहरे की झुर्रियाँ चमकने लगीं, काँपने लगीं, उसे देखकर, "तू आ गया लाल! चलती हूँ, भैया! पर, देख तो, तेरे चाचा क्या शिकायत कर रहे हैं? तू क्या पाजीपना करता है, बेटा?"

"क्या है, चाचा जी?" उसने सविनय, सुमधुर स्वर में मुझसे पूछा, "मैंने क्या अपराध किया है?"

"मैं तुमसे नाराज़ हूँ लाल!" मैंने गंभीर स्वर में कहा।

"क्यों, चाचा जी?"

"तुम बहुत बुरे होते जा रहे हो, जो सरकार के विरुद्ध षड्यंत्र करनेवाले के साथी हो। हाँ, तुम हो! देखो लाल की माँ, इसके चेहरे का रंग उड़ गया, यह सोचकर कि यह खबर मुझे कैसे मिली।"

सचमुच एक बार उसका खिला हुआ रंग ज़रा मुरझा गया, मेरी बातों से! पर तुरंत ही वह सँभला।

"आपने गलत सुना, चाचा जी। मैं किसी षड्यंत्र में नहीं। हाँ, मेरे विचार स्वतंत्र अवश्य हैं, मैं ज़रूरत-बेज़रूरत जिस-तिस के आगे उबल अवश्य उठता हूँ। देश की दुरवस्था पर उबल उठता हूँ, इस पशु-हृदय परतंत्रता पर।"

"तुम्हारी ही बात सही, तुम षड्यंत्र में नहीं, विद्रोह में नहीं, पर यह बक-बक क्यों? इससे फ़ायदा? तुम्हारी इस बक-बक से न तो देश की दुर्दशा दूर होगी और न उसकी पराधीनता। तुम्हारा काम पढ़ना है, पढ़ो। इसके बाद कर्म करना होगा, परिवार और देश की मर्यादा बचानी होगी। तुम पहले अपने घर का उद्धार तो कर लो, तब सरकार के सुधार का विचार करना।"

उसने नम्रता से कहा, "चाचा जी, क्षमा कीजिए। इस विषय में मैं आपसे विवाद नहीं करना चाहता।"

"चाहना होगा, विवाद करना होगा। मैं केवल चाचा जी नहीं, तुम्हारा बहुत कुछ हूँ। तुम्हें देखते ही मेरी आँखों के सामने रामनाथ नाचने लगते हैं, तुम्हारी बूढ़ी माँ घूमने लगती है। भला मैं तुम्हें बेहाथ होने दे सकता हूँ! इस भरोसे मत रहना।"

"इस पराधीनता के विवाद में, चाचा जी, मैं और आप दो भिन्न सिरों पर हैं। आप कट्टर राजभक्त, मैं कट्टर राजविद्रोही। आप पहली बात को उचित समझते हैं – कुछ कारणों से, मैं दूसरी को – दूसरे कारणों से। आप अपना पद छोड़ नहीं सकते – अपनी प्यारी कल्पनाओं के लिए, मैं अपना भी नहीं छोड़ सकता।"

"तुम्हारी कल्पनाएँ क्या हैं, सुनूँ तो! ज़रा मैं भी जान लूँ कि अबके लड़के कॉलेज की गरदन तक पहुँचते-पहुँचते कैसे-कैसे हवाई किले उठाने के सपने देखने लगते हैं। ज़रा मैं भी तो सुनूँ, बेटा।"

"मेरी कल्पना यह है कि जो व्यक्ति समाज या राष्ट्र के नाश पर जीता हो, उसका सर्वनाश हो जाए!"

जानकी उठकर बाहर चली, "अरे! तू तो जमकर चाचा से जूझने लगा। वहाँ चार बच्चे बेचारे दरवाज़े पर खड़े होंगे। लड़ तू, मैं जाती हूँ।" उसने मुझसे कहा, "समझा

दो बाबू, मैं तो आप ही कुछ नहीं समझती, फिर इसे क्या समझाऊँगी!" उसने फिर लाल की ओर देखा, "चाचा जो कहें, मान जा, बेटा। यह तेरे भले ही की कहेंगे।"

वह बेचारी कमर झुकाए, उस साठ बरस की वय में भी घूँघट सँभाले, चली गई। उस दिन उसने मेरी और लाल की बातों की गंभीरता नहीं समझी।

"मेरी कल्पना यह है कि...", उत्तेजित स्वर में लाल ने कहा, "ऐसे दुष्ट, व्यक्ति-नाशक राष्ट्र के सर्वनाश में मेरा भी हाथ हो।"

"तुम्हारे हाथ दुर्बल हैं, उनसे जिनसे तुम पंजा लेने जा रहे हो, चर्र-मर्र हो उठेंगे, नष्ट हो जाएँगे।"

"चाचा जी, नष्ट हो जाना तो यहाँ का नियम है। जो सँवारा गया है, वह बिगड़ेगा ही। हमें दुर्बलता के डर से अपना काम नहीं रोकना चाहिए। कर्म के समय हमारी भुजाएँ दुर्बल नहीं, भगवान की सहस्र भुजाओं की सखियाँ हैं।"

"तो तुम क्या करना चाहते हो?"

"जो भी मुझसे हो सकेगा, करूँगा।"

"षड्यंत्र?"

"ज़रूरत पड़ी तो ज़रूर..."

"विद्रोह?"

"हाँ, अवश्य!"

"हत्या?"

"हाँ, हाँ, हाँ!"

"बेटा, तुम्हारा माथा न जाने कौन सी किताब पढ़ते-पढ़ते बिगड़ रहा है। सावधान!"

मेरी धर्मपत्नी और लाल की माँ एक दिन बैठी हुई बातें कर रही थीं कि मैं पहुँच गया। कुछ पूछने के लिए कई दिनों से मैं उसकी तलाश में था।

"क्यों लाल की माँ, लाल के साथ किसके लड़के आते हैं तुम्हारे घर में?"

"मैं क्या जानूँ, बाबू!" उसने सरलता से कहा, "मगर वे सभी मेरे लाल ही की तरह मुझे प्यारे दिखते हैं। सब लापरवाह! वे इतना हँसते, गाते और हो-हल्ला मचाते हैं कि मैं मुग्ध हो जाती हूँ।"

मैंने एक ठंडी साँस ली, "हूँ, ठीक कहती हो। वे बातें कैसी करते हैं, कुछ समझ पाती हो?"

"बाबू, वे लाल की बैठक में बैठते हैं। कभी-कभी जब मैं उन्हें कुछ खिलाने-पिलाने जाती हूँ, तब वे बड़े प्रेम से मुझे 'माँ' कहते हैं। मेरी छाती फूल उठती है...मानो वे मेरे ही बच्चे हैं।"

"हूँ...", मैंने फिर साँस ली।

"एक लड़का उनमें बहुत ही हँसोड़ है। खूब तगड़ा और बली दिखता है। लाल कहता था, वह डंडा लड़ने में, दौड़ने में, घूँसेबाज़ी में, खाने में, छेड़खानी करने और हो-हो, हा-हा कर हँसने में समूचे कालेज में फ़र्स्ट है। उसी लड़के ने एक दिन, जब मैं उन्हें हलवा परोस रही थी, मेरे मुँह की ओर देखकर कहा, 'माँ! तू तो ठीक भारत माता-सी लगती है। तू बूढ़ी, वह बूढ़ी। उसका उजला हिमालय है, तेरे केश। हाँ, नक्शे से साबित करता हूँ...तू भारत माता है। सिर तेरा हिमालय...माथे की दोनों गहरी बड़ी रेखाएँ गंगा और यमुना, यह नाक विंध्याचल, ठोढ़ी कन्याकुमारी तथा छोटी बड़ी झुरियाँ-रेखाएँ भिन्न-भिन्न पहाड़ और नदियाँ हैं। ज़रा पास आ मेरे! तेरे केशों को पीछे से आगे बाएँ कंधे पर लहरा दूँ, वह बर्मा बन जाएगा। बिना उसके भारत माता का श्रृंगार शुद्ध न होगा'।"

जानकी उस लड़के की बातें सोच गद्‌गद हो उठी, "बाबू, ऐसा ढीठ लड़का! सारे बच्चे हँसते रहे और उसने मुझे पकड़, मेरे बालों को बाहर कर अपना बर्मा तैयार कर लिया!"

उसकी सरलता मेरी आँखों में आँसू बनकर छा गई। मैंने पूछा, "लाल की माँ, और भी वे कुछ बातें करते हैं? लड़ने की, झगड़ने की, गोला, गोली या बंदूक की?"

"अरे, बाबू," उसने मुसकराकर कहा, "वे सभी बातें करते हैं। उनकी बातों का कोई मतलब थोड़े ही होता है। सब जवान हैं, लापरवाह हैं। जो मुँह में आता है, बकते हैं। कभी-कभी तो पागलों-सी बातें करते हैं। महीनाभर पहले एक दिन लड़के बहुत

उत्तेजित थे। न जाने कहाँ, लड़कों को सरकार पकड़ रही है। मालूम नहीं, पकड़ती भी है या वे यों ही गप हाँकते थे। मगर उस दिन वे यही बक रहे थे, 'पुलिसवाले केवल संदेह पर भले आदमियों के बच्चों को त्रास देते हैं, मारते हैं, सताते हैं। यह अत्याचारी पुलिस की नीचता है। ऐसी नीच शासन-प्रणाली को स्वीकार करना अपने धर्म को, कर्म को, आत्मा को, परमात्मा को भुलाना है। धीरे-धीरे घुलाना-मिटाना है।'

एक ने उत्तेजित भाव से कहा, 'अजी, ये परदेसी कौन लगते हैं हमारे, जो बरबस राजभक्ति बनाए रखने के लिए हमारी छाती पर तोप का मुँह लगाए अड़े और खड़े हैं। उफ़! इस देश के लोगों के हिये की आँखें मुँद गई हैं। तभी तो इतने ज़ुल्मों पर भी आदमी आदमी से डरता है। ये लोग शरीर की रक्षा के लिए अपनी-अपनी आत्मा की चिता सँवारते फिरते हैं। नाश हो इस परतंत्रवाद का!'

दूसरे ने कहा, 'लोग ज्ञान न पा सकें, इसलिए इस सरकार ने हमारे पढ़ने-लिखने के साधनों को अज्ञान से भर रखा है। लोग वीर और स्वाधीन न हो सकें, इसलिए अपमानजनक और मनुष्यताहीन नीति-मर्दक कानून गढ़े हैं। गरीबों को चूसकर, सेना के नाम पर पले हुए पशुओं को शराब से, कबाब से, मोटा-ताज़ा रखती है यह सरकार। धीरे-धीरे जोंक की तरह हमारे धर्म, प्राण और धन चूसती चली जा रही है यह शासन-प्रणाली!'

'ऐसे ही अंट-संट ये बातूनी बका करते हैं, बाबू। जभी चार छोकरे जुटे, तभी यही चर्चा। लाल के साथियों का मिज़ाज भी उसी-सा अल्हड़-बिल्हड़ मुझे मालूम पड़ता है। ये लड़के ज्यों-ज्यों पढ़ते जा रहे हैं, त्यों-त्यों बक-बक में बढ़ते जा रहे हैं।"

"यह बुरा है, लाल की माँ!" मैंने गहरी साँस ली।

ज़मींदारी के कुछ ज़रूरी काम से चार-पाँच दिनों के लिए बाहर गया था। लौटने पर बँगले में घुसने के पूर्व लाल के दरवाज़े पर नज़र पड़ी तो वहाँ एक भयानक सन्नाटा-सा नज़र आया – जैसे घर उदास हो, रोता हो।

भीतर आने पर मेरी धर्मपत्नी मेरे सामने उदास मुख खड़ी हो गई।

"तुमने सुना?"

"नहीं तो, कौन सी बात?"

"लाल की माँ पर भयानक विपत्ति टूट पड़ी है।"

मैं कुछ-कुछ समझ गया, फिर भी विस्तृत विवरण जानने को उत्सुक हो उठा, "क्या हुआ? ज़रा साफ़-साफ़ बताओ।"

"वही हुआ जिसका तुम्हें भय था। कल पुलिस की एक पलटन ने लाल का घर घेर लिया था। बारह घंटे तक तलाशी हुई। लाल, उसके बारह-पंद्रह साथी, सभी पकड़ लिए गए हैं। सबके घरों से भयानक-भयानक चीज़ें निकली हैं।"

"लाल के यहाँ?"

"उसके यहाँ भी दो पिस्तौल, बहुत से कारतूस और पत्र पाए गए हैं। सुना है, उन पर हत्या, षड्यंत्र, सरकारी राज्य उलटने की चेष्टा आदि अपराध लगाए गए हैं।"

"हूँ," मैंने ठंडी साँस ली, "मैं तो महीनों से चिल्ला रहा था कि वह लौंडा धोखा देगा। अब यह बूढ़ी बेचारी मरी। वह कहाँ है? तलाशी के बाद तुम्हारे पास आई थी?"

"जानकी मेरे पास कहाँ आई! बुलवाने पर भी कल नकार गई। नौकर से कहलाया, 'परांठे बना रही हूँ, हलवा, तरकारी अभी बनाना है, नहीं तो, वे बिल्हड़ बच्चे हवालात में मुरझा न जाएँगे। जेलवाले और उत्साही बच्चों की दुश्मन यह सरकार उन्हें भूखों मार डालेगी। मगर मेरे जीते-जी यह नहीं होने का'।"

"वह पागल है, भोगेगी," मैं दुख से टूटकर चारपाई पर गिर पड़ा। मुझे लाल के कर्मों पर घोर खेद हुआ।

इसके बाद प्रायः एक वर्ष तक वह मुकदमा चला। कोई भी अदालत के कागज़ उलटकर देख सकता है, सी.आई.डी. ने और उनके प्रमुख सरकारी वकील ने उन लड़कों पर बड़े-बड़े दोषारोपण किए। उन्होंने चारों ओर गुप्त समितियाँ कायम की थीं, खर्चे और प्रचार के लिए डाके डाले थे, सरकारी अधिकारियों के यहाँ रात में छापा मारकर शस्त्र एकत्र किए थे। उन्होंने न जाने किस पुलिस के दारोगा को मारा था और न जाने कहाँ, न जाने किस पुलिस सुपरिंटेंडेंट को। ये सभी बातें सरकार की ओर से प्रमाणित की गईं।

उधर उन लड़कों की पीठ पर कौन था? प्राय: कोई नहीं। सरकार के डर के मारे पहले तो कोई वकील ही उन्हें नहीं मिल रहा था, फिर एक बेचारा मिला भी, तो 'नहीं' का भाई। हाँ, उनकी पैरवी में सबसे अधिक परेशान वह बूढ़ी रहा करती। वह लोटा, थाली, ज़ेवर आदि बेच-बेचकर सुबह-शाम उन बच्चों को भोजन पहुँचाती। फिर वकीलों के यहाँ जाकर दाँत निपोरती, गिड़गिड़ाती, कहती, "सब झूठ है। न जाने कहाँ से पुलिसवालों ने ऐसी-ऐसी चीज़ें हमारे घरों से पैदा कर दी हैं। वे लड़के केवल बातूनी हैं। हाँ, मैं भगवान का चरण छूकर कह सकती हूँ, तुम जेल में जाकर देख आओ, वकील बाबू। भला, फूल-से बच्चे हत्या कर सकते हैं?"

उसका तन सूखकर काँटा हो गया, कमर झुककर धनुष-सी हो गई, आँखें निस्तेज, मगर उन बच्चों के लिए दौड़ना, हाय-हाय करना उसने बंद न किया। कभी-कभी सरकारी नौकर, पुलिस या वार्डन झुँझलाकर उसे झिड़क देते, धकिया देते।

उसको अंत तक यह विश्वास रहा कि यह सब पुलिस की चालबाज़ी है। अदालत में जब दूध का दूध और पानी का पानी किया जाएगा, तब वे बच्चे ज़रूर बेदाग छूट जाएँगे। वे फिर उसके घर में लाल के साथ आएँगे। उसे 'माँ' कहकर पुकारेंगे।

मगर उस दिन उसकी कमर टूट गई, जिस दिन ऊँची अदालत ने भी लाल को, उस बंगड़ लठैत को तथा दो और लड़कों को फाँसी और दस को दस वर्ष से सात वर्ष तक की कड़ी सज़ाएँ सुना दीं।

वह अदालत के बाहर झुकी खड़ी थी। बच्चे बेड़ियाँ बजाते, मस्ती से झूमते बाहर आए। सबसे पहले उस बंगड़ की नज़र उसपर पड़ी।

"माँ!" वह मुसकराया, "अरे, हमें तो हलवा खिला-खिलाकर तूने गधे-सा तगड़ा कर दिया है, ऐसा कि फाँसी की रस्सी टूट जाए और हम अमर के अमर बने रहें, मगर तू स्वयं सूखकर काँटा हो गई है। क्यों पगली, तेरे लिए घर में खाना नहीं है क्या?"

© NCERT not to be republished

"माँ!" उसके लाल ने कहा, "तू भी जल्द वहीं आना जहाँ हम लोग जा रहे हैं। यहाँ से थोड़ी ही देर का रास्ता है, माँ! एक साँस में पहुँचेगी। वहीं हम स्वतंत्रता से मिलेंगे। तेरी गोद में खेलेंगे। तुझे कंधे पर उठाकर इधर से उधर दौड़ते फिरेंगे। समझती है? वहाँ बड़ा आनंद है।"

"आएगी न, माँ?" बंगड़ ने पूछा।

"आएगी न, माँ?" लाल ने पूछा।

"आएगी न, माँ?" फाँसी–दंड प्राप्त दो दूसरे लड़कों ने भी पूछा।

और वह टुकुर–टुकुर उनका मुँह ताकती रही – "तुम कहाँ जाओगे पगलो?"

जब से लाल और उसके साथी पकड़े गए, तब से शहर या मुहल्ले का कोई भी आदमी लाल की माँ से मिलने से डरता था। उसे रास्ते में देखकर जाने–पहचाने बगलें झाँकने लगते। मेरा स्वयं अपार प्रेम था उस बेचारी बूढ़ी पर, मगर मैं भी बराबर दूर ही रहा। कौन अपनी गदरन मुसीबत में डालता, विद्रोही की माँ से संबंध रखकर?

उस दिन ब्यालू करने के बाद कुछ देर के लिए पुस्तकालय वाले कमरे में गया, किसी महान लेखक की कोई महान कृति क्षणभर देखने के लालच से। मैंने मेज़िनी की एक जिल्द निकालकर उसे खोला। पहले ही पन्ने पर पेंसिल की लिखावट देखकर चौंका। ध्यान देने पर पता चला, वे लाल के हस्ताक्षर थे। मुझे याद पड़ गई। तीन वर्ष पूर्व उस पुस्तक को मुझसे माँगकर उस लड़के ने पढ़ा था।

एक बार मेरे मन में बड़ा मोह उत्पन्न हुआ उस लड़के के लिए। उसके पिता रामनाथ की दिव्य और स्वर्गीय तसवीर मेरी आँखों के आगे नाच गई। लाल की माँ पर उसके सिद्धांतों, विचारों या आचरणों के कारण जो वज्रपात हुआ था, उसकी एक ठेस मुझे भी, उसके हस्ताक्षर को देखते ही लगी। मेरे मुँह से एक गंभीर, लाचार, दुर्बल साँस निकलकर रह गई।

पर, दूसरे ही क्षण पुलिस सुपरिंटेंडेंट का ध्यान आया। उसकी भूरी, डरावनी, अमानवी आँखें मेरी 'आप सुखी तो जग सुखी' आँखों में वैसे ही चमक गईं, जैसे

ऊजड़ गाँव के सिवान में कभी-कभी भुतही चिनगारी चमक जाया करती है। उसके रूखे फ़ौलादी हाथ, जिनमें लाल की तसवीर थी, मानो मेरी गरदन चापने लगे। मैं मेज़ पर से रबर (इरेज़र) उठाकर उस पुस्तक पर से उसका नाम उधेड़ने लगा।

उसी समय मेरी पत्नी के साथ लाल की माँ वहाँ आई। उसके हाथ में एक पत्र था।

"अरे!" मैं अपने को रोक न सका, "लाल की माँ! तुम तो बिलकुल पीली पड़ गई हो। तुम इस तरह मेरी ओर निहारती हो, मानो कुछ देखती ही नहीं हो। यह हाथ में क्या है?"

उसने चुपचाप पत्र मेरे हाथ में दे दिया। मैंने देखा, उसपर जेल की मुहर थी। सज़ा सुनाने के बाद वह वहीं भेज दिया गया था, यह मुझे मालूम था।

मैं पत्र निकालकर पढ़ने लगा। वह उसकी अंतिम चिट्ठी थी। मैंने कलेजा रूखाकर उसे ज़ोर से पढ़ दिया –

"माँ!

जिस दिन तुम्हें यह पत्र मिलेगा उसके सवेरे मैं बाल अरुण के किरण-रथ पर चढ़कर उस ओर चला जाऊँगा। मैं चाहता तो अंत समय तुमसे मिल सकता था, मगर इससे क्या फ़ायदा! मुझे विश्वास है, तुम मेरी जन्म-जन्मांतर की जननी ही रहोगी। मैं तुमसे दूर कहाँ जा सकता हूँ! माँ! जब तक पवन साँस लेता है, सूर्य चमकता है, समुद्र लहराता है, तब तक कौन मुझे तुम्हारी करुणामयी गोद से दूर खींच सकता है?

दिवाकर थमा रहेगा, अरुण रथ लिए जमा रहेगा! मैं, बंगड़ वह, यह सभी तेरे इंतज़ार में रहेंगे।

हम मिले थे, मिले हैं, मिलेंगे। हाँ, माँ!

तेरा...

लाल"

काँपते हाथ से पढ़ने के बाद पत्र को मैंने उस भयानक लिफ़ाफ़े में भर दिया। मेरी पत्नी की विकलता हिचकियों पर चढ़कर कमरे को करुणा से कँपाने लगी। मगर, वह जानकी ज्यों-की-त्यों, लकड़ी पर झुकी, पूरी खुली और भावहीन आँखों से मेरी ओर देखती रही, मानो वह उस कमरे में थी ही नहीं।

© NCERT not to be republished

क्षणभर बाद हाथ बढ़ाकर मौन भाषा में उसने पत्र माँगा। और फिर, बिना कुछ कहे कमरे के फाटक के बाहर हो गई, डुगुर-डुगुर लाठी टेकती हुई।

इसके बाद शून्य-सा होकर मैं धम से कुरसी पर गिर पड़ा। माथा चक्कर खाने लगा। उस पाजी लड़के के लिए नहीं, इस सरकार की क्रूरता के लिए भी नहीं, उस बेचारी भोली, बूढ़ी जानकी – लाल की माँ के लिए। आह! वह कैसी स्तब्ध थी। उतनी स्तब्धता किसी दिन प्रकृति को मिलती तो आँधी आ जाती। समुद्र पाता तो बौखला उठता।

जब एक का घंटा बजा, मैं ज़रा सगबगाया। ऐसा मालूम पड़ने लगा मानो हरारत पैदा हो गई है...माथे में, छाती में, रग-रग में। पत्नी ने आकर कहा, "बैठे ही रहोगे! सोओगे नहीं?" मैंने इशारे से उन्हें जाने का कहा।

फिर मेज़िनी की जिल्द पर नज़र गई। उसके ऊपर पड़े रबर पर भी। फिर अपने सुखों की, ज़मींदारी की, धनिक जीवन की और उस पुलिस-अधिकारी की निर्दय, नीरस, निस्सार आँखों की स्मृति कलेजे में कंपन भर गई। फिर रबर उठाकर मैंने उस पाजी का पेंसिल-खचित नाम पुस्तक की छाती पर से मिटा डालना चाहा।

"माँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ..."

मुझे सुनाई पड़ा। ऐसा लगा, गोया लाल की माँ कराह रही है। मैं रबर हाथ में लिए, दहलते दिल से, खिड़की की ओर बढ़ा। लाल के घर की ओर कान लगाने पर सुनाई न पड़ा। मैं सोचने लगा, भ्रम होगा। वह अगर कराहती होती तो एकाध आवाज़ और अवश्य सुनाई पड़ती। वह कराहनेवाली औरत है भी नहीं। रामनाथ के मरने पर भी उस तरह नहीं घिघियाई जैसे साधारण स्त्रियाँ ऐसे अवसरों पर तड़पा करती हैं।

मैं पुनः सोचने लगा। वह उस नालायक के लिए क्या नहीं करती थी! खिलौने की तरह, आराध्य की तरह, उसे दुलराती और सँवारती फिरती थी। पर आह रे छोकरे!

"माँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ ऽँ..."

फिर वही आवाज़। ज़रूर जानकी रो रही है। ज़रूर वही विकल, व्यथित, विवश बिलख रही है। हाय री माँ! अभागिनी वैसे ही पुकार रही है जैसे वह पाजी गाकर, मचलकर, स्वर को खींचकर उसे पुकारता था।

अँधेरा धूमिल हुआ, फीका पड़ा, मिट चला। उषा पीली हुई, लाल हुई। रवि रथ लेकर वहाँ क्षितिज से उस छोर पर आकर पवित्र मन से खड़ा हो गया। मुझे लाल के पत्र की याद आ गई।

"माँ ाँ ाँ ाँ ाँ ाँ ाँ ाँ ाँ ाँ ाँ..."

मानो लाल पुकार रहा था, मानो जानकी प्रतिध्वनि की तरह उसी पुकार को गा रही थी। मेरी छाती धक्-धक् करने लगी। मैंने नौकर को पुकारकर कहा, "देखो तो, लाल की माँ क्या कर रही है?"

जब वह लौटकर आया, तब मैं एक बार पुनः मेज़ और मेज़िनी के सामने खड़ा था। हाथ में रबर लिए उसी उद्देश्य से। उसने घबराए स्वर से कहा, "हुज़ूर, उनकी तो अजीब हालत है। घर में ताला पड़ा है और वे दरवाज़े पर पाँव पसारे, हाथ में कोई चिट्ठी लिए, मुँह खोल, मरी बैठी हैं। हाँ सरकार, विश्वास मानिए, वे मर गई हैं। साँस बंद है, आँखें खुलीं..."

प्रश्न-अभ्यास

1. क्या लाल का व्यवहार सरकार के विरुद्ध षड्यंत्रकारी था?
2. पूरी कहानी में जानकी न तो शासन-तंत्र के समर्थन में है न विरोध में, किंतु लेखक ने उसे केंद्र में ही नहीं रखा बल्कि कहानी का शीर्षक बना दिया। क्यों?
3. चाचा जानकी तथा लाल के प्रति सहानुभूति तो रखता है किंतु वह डरता है। यह डर किस प्रकार का है और क्यों है?
4. इस कहानी में दो तरह की मानसिकताओं का संघर्ष है, एक का प्रतिनिधित्व लाल करता है और दूसरे का उसका चाचा। आपकी नज़र में कौन सही है? तर्कसंगत उत्तर दीजिए।
5. उन लड़कों ने कैसे सिद्ध किया कि जानकी सिर्फ़ माँ नहीं भारतमाता है? कहानी के आधार पर उसका चरित्र-चित्रण कीजिए।
6. विद्रोही की माँ से संबंध रखकर कौन अपनी गरदन मुसीबत में डालता? इस कथन के आधार पर उस शासन-तंत्र और समाज-व्यवस्था पर प्रकाश डालिए।

7. चाचा ने लाल का पेंसिल-खचित नाम पुस्तक की छाती पर से क्यों मिटा डालना चाहा?
8. भारत माता की छवि या धारणा आपके मन में किस प्रकार की है?
9. जानकी जैसी भारत माता हमारे बीच बनी रहे, इसके लिए 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' के संदर्भ में विचार कीजिए।
10. निम्नलिखित का आशय स्पष्ट कीजिए –

    (क) पुलिसवाले केवल............धीरे-धीरे घुलाना-मिटाना है।

    (ख) चाचा जी, नष्ट हो जाना............सहस्र भुजाओं की सखियाँ हैं।

योग्यता-विस्तार

1. पुलिस के साथ दोस्ती की जानी चाहिए या नहीं? अपनी राय लिखिए।
2. लाल और उसके साथियों से आपको क्या प्रेरणा मिलती है?
3. 'उसकी माँ' के आधार पर अपनी माँ के बारे में एक कहानी लिखिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

पुश्त – पीढ़ी

फ़रमाबरदार – आज्ञाकारी, सेवक

पाजीपन – बदमाशी

दुरवस्था – बुरी हालत

हँसोड़ – हँसमुख प्रवृत्ति का

नीति-मर्दक कानून – नीति को मिटाने वाला, नष्ट करने वाला कानून

बंगड़ – शरारती

ब्यालू – रात का भोजन

बाल अरुण – सुबह-सुबह का सूर्य, (लालिमायुक्त)